खण्ड – 3 : प्रमुख विचारक – 2

इकाई – 2 : बेनेदितो क्रोचे

इकाई की रूपरेखा

3.2.0. उद्देश्य कथन
3.2.1. प्रस्तावना
3.2.2. बेनेदितो क्रोचे : व्यक्ति परिचय
  3.2.2.1. व्यक्तित्व
  3.2.2.2. कृतियाँ
3.2.3. बेनेदितो क्रोचे का अभिव्यंजना सिद्धान्त
  3.2.3.1. संवेदन और सहजानुभूति
  3.2.3.2. सहजानुभूति, अभिव्यंजना तथा अभिव्यक्ति
  3.2.3.3. कला सृजन की प्रक्रिया
  3.2.3.4. अभिव्यंजनावाद तथा वक्रोक्ति सिद्धान्त
3.2.4. अभिव्यंजना सिद्धान्त की सीमाएँ
3.2.5. सारांश
3.2.6. शब्दावली
3.2.7. उपयोगी ग्रन्थ सूची
3.2.8. सम्बन्धित प्रश्न

3.2.0. उद्देश्य कथन

पाश्चात्य काव्य शास्त्र के प्रमुख विचारकों की श्रृंखला में खण्ड-3 की प्रस्तुत दूसरी इकाई बेनेदितो क्रोचे के साहित्य चिन्तन पर आधारित है। इससे पहले आप पाश्चात्य साहित्य चिन्तन के अध्ययन अनुक्रम में कई विचारकों और उनके स्थापनाओं की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। आपने देखा कि काव्य कला और सृजन के क्षेत्र में बाह्य जगत् के प्रतिमानों पर बल देने वाले विचारकों का चिन्तन वस्तुतः वस्तुवादी है। लेकिन, क्रोचे जैसे विचारक काव्य चिन्तन की प्रक्रिया में बाह्य जगत् की भूमिका को लगभग नकार देते हैं। प्रस्तुत इकाई में अब आप बेनेदितो क्रोचे के 'अभिव्यंजनावाद' का विस्तार से अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

3.2.0.1. बेनेदितो क्रोचे के काव्य चिन्तन को समझ सकेंगे।
3.2.0.2. अभिव्यंजना सिद्धान्त के आलोक में संवेदन, सहजानुभूति व अभिव्यक्ति की व्याख्या कर सकेंगे।
3.2.0.3. कला सृजन की प्रक्रिया का विवेचन कर सकेंगे।
3.2.0.4. अभिव्यंजनावाद तथा वक्रोक्तिवाद सिद्धान्त का तुलनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।

3.2.1. प्रस्तावना

भावना, बुद्धि या विचार तथा कल्पना – ये तीन तत्त्व ऐसे हैं जो प्रत्येक युग की कविता के साथ आत्यंतिक रूप से सम्बद्ध रहे हैं; उनके साथ ही वह इन्द्रिय बोध भी है जिसके माध्यम से कवि संसार से परिचित होता है और जिसकी गहरी छाप उसकी कविता में होती है। यही वे मूलभूत तत्त्व हैं, जिन्हें आधुनिक काव्य चिन्तकों ने भी अपने ढंग से युग की बदलती हुई संवेदनाओं के अनुरूप, अपनी व्याख्या से समन्वित करके सर्जना के प्रमुख तत्त्वों की पहचान करते हैं। उल्लेखनीय है कि पाश्चात्य काव्यशास्त्र के अन्तर्गत जहाँ एक ओर कतिपय सिद्धान्त वस्तुवादी प्रतिमानों पर बहुत जोर देते हैं यानी उनमें बाह्य जगत् के प्रतिमानों को लेकर विशेष आकर्षण है, वहीं दूसरी ओर आत्मपरकता पर जोर देने वाले कुछ सौन्दर्यशास्त्रीय विचारक कलाकार की चेतना को केन्द्र में रखकर कला को ही मूलत: आत्माभिव्यक्ति मानते हैं। पाश्चात्य का स्वच्छंदतावाद, कलावाद आदि सिद्धान्त इसी कोटि के हैं। इस परिप्रेक्ष्य में बेनेदितो क्रोचे का 'अभिव्यंजनावाद' आत्मपरक काव्य सिद्धान्तों की चरम सीमा पर रखा जा सकता है।

3.2.2. बेनेदितो क्रोचे : व्यक्ति परिचय

आधुनिक युग के पाश्चात्य विचारकों में बेनेदितो क्रोचे का महत्त्वपूर्ण योगदान है। काव्य चिन्तन का जो स्वरूप उनके विवेचन में उभरकर सामने आया है, उससे उनके रचनात्मक व्यक्तित्व का पता चलता है। वस्तुतः क्रोचे के लिए बाह्य जगत् की घटनाएँ महत्त्वहीन हैं, इसलिए मानव जीवन की तमाम क्रियाएँ चेतना के स्तर पर ही पूरी होती हैं। उल्लेखनीय है कि उनके समय में मार्क्सवादी विचारधारा भौतिकवाद की स्थापना करते हुए बाह्य जगत् और तत्सम्बन्धी सत्य को स्वीकारने पर बल दे रही थी। इतना ही क्रोचे के पूर्ववर्ती कई विचाराकों, खासकर प्रत्ययवादी विचारकों ने भी बाह्य जगत् की सत्ता पूरी तरह से नकारी नहीं थी। लेकिन, बेनेदितो क्रोचे अपने काव्यशास्त्रीय चिन्तन में केवल मन या चेतना के स्तर पर सत्य या तथ्य का अस्तित्व स्वीकार करते हैं।

3.2.2.1. व्यक्तित्व

बेनेदितो क्रोचे का जन्म सन 1886 ई. में नेपल्स (इटली) में हुआ। वे बचपन से ही तार्किक प्रवृत्ति व अध्ययनशील प्रवृत्ति के थे। वैसे तो बचपन में धर्म के प्रति उनकी कोई आस्था नहीं थी, लेकिन आगे समय बीतने के साथ रोम विश्वविद्यालय में दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र व नीतिशास्त्र का अध्ययन करते हुए उनका चिन्तन क्रमश: अमूर्तता और आत्मपरकता की ओर प्रशस्त हुआ। अन्तत: बाह्य जगत् को पूर्ण निरर्थक मानते हुए वे चेतना को परम सत्य के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं तथा यह मत स्थापित करते हैं कि मानव जीवन की सारी क्रियाएँ मूलत: चेतना के स्तर पर ही सम्पन्न होती हैं। उनके अनुसार कला का सृजन भी चेतना के स्तर पर ही आरम्भ होकर समाप्त हो जाता है।

3.2.2.2. कृतियाँ

बेनेदितो क्रोचे का लेखन बहुआयामी था और वे आजीवन गहन अध्ययन व लेखन में सक्रिय रहे। दर्शनशास्त्र, सौन्दर्यशास्त्र, इतिहास, तर्कशास्त्र आदि विषयों पर उनका लेखन अत्यन्त उल्लेखनीय हैं। वर्ष 1900 ई. में उनका एक लेख प्रकाशित हुआ जिसका शीर्षक था – 'एस्थेटिक ऐज़ द सायंस आफॅ एक्सप्रेशन एंड जनरल लिन्गिविस्टक्स'। उसके दो साल बाद यानी 1902 ई. में उनकी बहुचर्चित पुस्तक 'एस्थेटिक' आई जिसमें उन्होंने 'अभिव्यंजना सिद्धान्त' का प्रतिपादन किया है। उसी वर्ष उन्होंने 'लॉ क्रितीका' नामक पत्रिका भी निकाली। आगे चलकर सौन्दर्यशास्त्रीय चिन्तन के आलोक में उनके द्वारा रचित सौन्दर्यशास्त्रीय निबन्धों का संग्रह 'न्यू एस्सेज़ ऑन एस्थेटिक' का प्रकाशन 1920 ई. में हुआ। स्मरणीय है कि सौन्दर्यशास्त्रीय प्रमुख स्थापनाओं में 'अभिव्यंजनावाद' को बेनेदितो क्रोचे का सबसे बड़ा रचनात्मक अवदान माना जाता है।

3.2.3. बेनेदितो क्रोचे का अभिव्यंजना सिद्धान्त

वस्तुतः बेनेदितो क्रोचे द्वारा स्थापित 'अभिव्यंजना सिद्धान्त' एक कला सिद्धान्त है जिसका सम्बन्ध मूलत: सौन्दर्यशास्त्र से है। उनकी स्पष्ट धारणा है कि कलाकार अपनी कलाकृति में अपने अन्तर की अभिव्यक्ति करता है। चूँकि, यह अभिव्यक्ति विचारात्मक होती है, इसलिए उसका स्वरूप उसके मानस में मौजूद होता है तथा बाह्य जगत् से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होता। हालाँकि, इस सन्दर्भ में उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि बाह्य जगत् केवल बिम्ब निर्माण में सहायक हो सकता है।

आलोच्य सन्दर्भ में 'अभिव्यंजनावाद' को समझने के लिए क्रोचे के की चेतना सम्बन्धी अवधारणा से संक्षिप्त परिचय भी अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। जैसा कि क्रोचे यह मानते हैं कि मनुष्य जीवन की तमाम क्रियाएँ चेतना के स्तर पर सम्पन्न होती हैं। इसलिए उनकी दृष्टि में चेतना ही परम सत्य है। और, जीवन की सैद्धान्तिक (सहजानुभूति अभिव्यंजना और अवधारणात्मक) और व्यावहारिक क्रियाएँ (सामान्य स्वेच्छा चालित और नैतिक) इसी के द्वारा संचालित होती हैं। इस आलोक में वे विभिन्न क्रियाओं के क्रम का निर्धारण भी करते हैं। सहजानुभूति अभिव्यंजना इनमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, जबकि नैतिक क्रियाओं का क्रम सबसे बाद में आता है।

3.2.3.1. संवेदन और सहजानुभूति

बेनेदितो क्रोचे का अभिव्यंजना सिद्धान्त वस्तुतः चेतना की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण क्रिया सहजानुभूति अभिव्यंजना पर आधारित है। जैसा कि क्रोचे ने कहा है कि रचनाकार की सहजानुभूति ही अभिव्यंजना है और अभिव्यंजना ही रचना। यह सहजानुभूति विभिन्न संवेदनों के माध्यम से होती है। सामान्यतः 'संवेदना' और 'अनुभूति' को एक ही अर्थ में ग्रहण किया जाता है। अनुभूति का सम्बन्ध अनुभव या चेतना से होता है। लेकिन,

संवेदन को अनुभूति से अलग मानते हुए क्रोचे ने उसे चेतना से पूर्व क्रिया की संज्ञा प्रदान कीहै। इस तरह संवेदन तो अपरूप होते हैं तथा चेतना ही उनकी पहचान को रूपायित करती है।

चेतना का सम्बन्ध कहीं-न-कहीं बोध यानी ज्ञान से जुड़ा हुआ है, इसलिए क्रोचे की प्रबल धारणा है कि चेतना के अभाव में सहजानुभूति सम्भव नहीं है। चेतना के सक्रिय होने पर ही सहजानुभूति हो सकती है। इतना ही नहीं, कला सृजन में यह शक्ति बेहद प्रभावशाली है । क्योंकि, बोध ही भावपरक होता है तथा संवेदनों को सहजानुभूति में परिवर्तित करता है। मनुष्य के हृदय में यह संवेदनों के बिम्ब के रूप में आता है और इस प्रकार के बिम्बों के संश्लेषण से ही अन्तत: कला का सृजन होता है।

बेनेदितो क्रोचे की मान्यता है कि सामान्य व्यक्ति और कलाकार दोनों में सहजानुभूति होती है। हालाँकि, दोनों की सहजानुभूति की मात्रा में अन्तर होता है। कलाकार की सहजानुभूति अधिक व्यापक एवं विस्तृत होती है। यही कारण है कि वह कवि या सामान्य व्यक्ति में गुण या प्रतिभा का कोई अन्तर नहीं मानता। उनकी स्थापना है कि प्रकृति की अनुकृति का वास्तविक अर्थ सहजानुभूति ही है। इस प्रकार 'अभिव्यंजना' को ही वह 'कला' स्वीकार करता है । अस्तु, संवेदन और सहजानुभूति के आलोक में क्रोचे की स्थापना के कतिपय महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है; यथा –

(i) बाह्य जगत् का असर इन्द्रियों पर संवेदनों के रूप में पड़ता है।

(ii) केवल चेतना सक्रिय होने पर ही संवेदनों का बोध होता है। और, कल्पना शक्ति के माध्यम से ही चेतना सक्रिय होती है।

(iii) संवेदनों का बोध ही सहजानुभूति है। लेकिन इसमें बुद्धि तथा तर्क की शक्तियों और विश्लेषण या वर्गीकरण की क्रियाओं का कोई स्थान नहीं होता।

(iv) बाह्य जगत् व्यक्ति को चेतना के द्वारा ही अपनी प्रतीति और बोध कराता है। इस प्रकार चेतना ही अन्तिम सत्य है।

3.2.3.2. सहजानुभूति, अभिव्यंजना तथा अभिव्यक्ति

बेनेदितो क्रोचे सहजानुभूति और अभिव्यंजना को अभिन्न स्वीकार करते हैं और उनके अनुसार ये मानसिक क्रियाएँ हैं। बाह्य जगत् में इनका मूर्त होना आवश्यक नहीं है। इसी अनुक्रम में वे कला को भी अभिव्यंजना के स्तर पर ही पूर्ण स्वीकार कर लेते हैं। दूसरे शब्दों में वह 'अभिव्यंजना' को ही कला कहता है।

'सौन्दर्यवाद' की व्याख्या करते हुए क्रोचे उसके चार स्तरों (अन्त:संस्कार अथवा आत्मसंवेदन, अभिव्यंजना, आनुषंगिक आनन्द और अभिव्यक्ति) की परिकल्पना करते हैं। उनके विचार में किसी भी कलाकृति को देखकर मन पर पड़ने वाले सहज प्रभाव और उससे उठने वाली विभिन्न संवेदनाएँ अन्त:संस्कार के अन्तर्गत आती हैं। उल्लेखनीय है कि सहजानुभूति का जन्म इसी अन्त:संस्कार से होता है।

अभिव्यंजना को स्वयं प्रकाश ज्ञान या सौन्दर्य भी कहा गया है। यह सौन्दर्य संवेगों से भिन्न होता है। उदाहरण के तौर पर संवेग क्षणिक और अरूप होते हैं जो सौन्दर्य का रूप तभी ग्रहण करते हैं जब किसी बिम्ब के रूप में सामने आते हैं। चूँकि, स्वयं प्रकाश ज्ञान किसी बौद्धिक प्रक्रिया अथवा विचारधारा पर आधारित है, इसलिए यह तो आत्मा की सहज क्रिया है। वस्तुतः क्रोचे सौन्दर्य का आधार अभिव्यंजना को स्वीकार करते हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि जैसे स्वयं प्रकाश ज्ञान सहज अनुभूति का विषय है, ठीक उसी प्रकार कला भी सहज अनुभूति पर आधारित है। कलात्मक अनुभूतियाँ अपनी प्रकृति में यद्यपि व्यापक एवं जटिल होती हैं, तथापि वे स्वयं प्रकाश ज्ञान ही हैं।

'अभिव्यंजनावाद' की विवेचना के निहितार्थ, क्रोचे अपनी इस मान्यता की ओर भी ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं कि अभिव्यंजना से आनन्द की अनुभूति होती है अथवा यह कह सकते हैं कि अभिव्यंजना के अवसर पर एक विशेष प्रकार के आनन्द का अनुभव होता है जो उस भाव को अभिव्यक्त करने के लिए उसे अभिप्रेरित करता है, उत्साहित करता है।

बेनेदितो क्रोचे की अवधारणा के अनुसार प्रत्येक सहजानुभूति अवश्य ही अभिव्यक्ति होती है। उल्लेखनीय है कि अभिव्यक्ति से उनका अभिप्राय केवल शाब्दिक व्यंजना से नहीं है, अपितु रूप, रंग, रेखा, ध्वनि आदि जैसे अशाब्दिक व्यंजनाओं से भी है। इस तरह सहजानुभूति आवश्यक रूप से अभिव्यंजना ही है और इन दोनों में भेद नहीं किया जा सकता है। सहजानुभूति और अभिव्यक्ति के तादात्म्य पर प्रकाश डालते हुए स्टॉक जेम्स ने यह स्पष्ट किया है कि "क्रोचे के दर्शन में कला सहजानुभूति के अतिरिक्त कुछ नहीं अथवा वह मानस के अन्दर प्रभावों की अभिव्यक्ति है"। सहजानुभूति तब कला होती है जब 'आत्म' सहजानुभूति में रमता है और सिर्फ पूर्ण अभिव्यक्ति की क्रिया में एकाग्र होता है।

वस्तुतः अभिव्यंजना पूर्णत: आन्तरिक वस्तु है। जब कवि हृदय में वस्तु का बिम्ब या रूप स्पष्ट हो जाता है तो उसका कार्य पूरा हो जाता है। इस आन्तरिक भाव को अभिव्यक्त करना आवश्यक नहीं है। क्योंकि, कला सदैव आन्तरिक होती है तथा जिसे बहिर्गत कहा जाता है, वह कलाकृति नहीं। आलोच्य परिप्रेक्ष्य में कला भले ही आन्तरिक वस्तु है, लेकिन कुछ पल ऐसे होते हैं जिन्हें बाँधने के लिए कलाकार व्याकुल हो उठता है। उसे विभिन्न अनुशासनों तथा वर्जनाओं के अन्तर्गत अपनी कला को सचेत भाव से संवारना पड़ता है। और, उस स्थिति में कला सहज सौन्दर्य सृष्टि न होकर सामाजिक उपभोग हेतु एक उपयोगी वस्तु मात्र बनकर रह जाती है। साथ-ही-साथ सौन्दर्यशास्त्र से हटकर वह समाजशास्त्र की परिधि में आ जाती है।

अस्तु, संवेदन कला के लिए सर्वप्रथम व व्यापक शर्त है। इस आलोक में जब चेतना की क्रिया या कल्पना का योग संवेदनों में होता है, तब वे सहजानुभूति अभिव्यंजना में परिवर्तित हो जाते हैं। रचनाकार रंग, कूची, शब्द, प्रस्तरखण्ड आदि का सहारा लेकर अपनी आन्तरिक अनुभूति को स्थूल रूप देता है तथा बाह्यकरण की इस प्रक्रिया के माध्यम से सहजानुभूतियों को नष्ट होने से बचाता है।

3.2.3.3. कला सृजन की प्रक्रिया

बेनेदितो क्रोचे की यह एक प्रमुख स्थापना है कि कलात्मक अनुभूति का क्षेत्र अधिक विस्तृत और व्यापक होता है। हालाँकि, अपनी कार्यप्रणाली में वह साधारण सहजानुभूति से भिन्न नहीं होता। इस प्रकार उसका अन्तर तीव्रता नहीं विस्तार में है। उनके अनुसार जिस प्रकार एक प्रस्तरखण्ड जिन रासायनिक तत्त्वों से निर्मित होता है, उन्हीं से ऊँचे-ऊँचे पर्वतों का भी निर्माण होता है, ठीक उसी प्रकार जीवनानुभूति और कल्पनात्मक अनुभूति में कोई स्पष्टत: अन्तर नहीं है। यही कारण है कि क्रोचे कलाकृति की एकता और अखण्डता में विश्वास करता है। उनके अनुसार कला सृजन की प्रक्रिया मानसिक स्तर पर ही बिम्ब विधान के माध्यम से पूरी हो जाती है। बाह्य जगत् में काव्य, चित्र, संगीत, मूर्ति आदि के रूप में उसकी अभिव्यक्ति एक अतिरिक्त व अनावश्यक क्रिया है। विवेचनार्थ, वे कला की सृजन प्रक्रिया के चार चरणों का प्रतिपादन करते हैं; यथा –

1. प्रथम चरण में बाह्य जगत् के उद्दीपन व्यक्ति की संवेदना को स्पर्श करते हैं, किन्तु उसे उनका बोध नहीं होता। इस प्रकार इस चरण का सम्बन्ध अमूर्त संवेदनों के स्तर से है।

2. द्वितीय चरण चेतना के सक्रिय होने से सम्बन्धित है। इसके अन्तर्गत कल्पना के माध्यम से व्यक्ति की चेतना सक्रिय होती है और संवेदनों का बोध होने लगता है। इस बोध के साथ ही उन संवेदनों के संश्लेषण तथा अन्वय की क्रिया भी संचालित है जो कि सहजानुभूति-अभिव्यंजना का स्तर है।

3. तृतीय चरण को बेनेदितो क्रोचे 'प्रगीतात्मक सहजानुभूति' की संज्ञा प्रदान करते हैं। यह एक महत्त्वपूर्ण चरण है। इस चरण में द्वितीय चरण के संश्लेषण और अन्वय की प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्ति के मानस में उन संवेदनों के बिम्ब बन जाते हैं और मन ही मन में वह शब्द संयोजना, आकार या रेखाओं की परिकल्पना या संगीत के माध्यम से कलाकृति गढ़ लेता है।

4. चतुर्थ चरण वैकल्पिक प्रकृति का होता है यानी इसके होने अथवा न होने से कला के सृजन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वस्तुतः इस चरण में मानसिक स्तर पर पूर्ण कला काव्य, चित्र, मूर्ति आदि के रूप में बाह्य जगत् में अभिव्यक्त होती है। चूँकि, बाह्य जगत् में अभिव्यक्त होने पर कला पर अनेक राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक आदि अनुशासनों के नियंत्रण लागू होने लगते हैं तथा उसका स्वतंत्र स्वरूप तथा स्वायत्तता नष्ट हो जाती है, इसलिए वह कला न रहकर उपयोगिता की एक वस्तु बनकर रह जाती है। क्रोचे ऐसी स्थिति को अवांछनीय मानते हैं।

3.2.3.4. अभिव्यंजनावाद तथा वक्रोक्ति सिद्धान्त

विदित है कि प्रख्यात आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने पाश्चात्य तथा भारतीय काव्यशास्त्र के तुलनात्मक अध्ययन व विश्लेषण के निहितार्थ क्रोचे के 'अभिव्यंजना सिद्धान्त' और भारतीय काव्य चिन्तक कुन्तक के 'वक्रोक्ति सिद्धान्त' का उल्लेखनीय विवेचन प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार इन दोनों स्थापनाओं में

कई बिन्दुओं पर साम्य है। इतना ही नहीं, अभिव्यंजना सिद्धान्त को वे 'भारतीय वक्रोक्तिवाद का विलायती उत्थान' के रूप में स्वीकार करते हैं। हालाँकि, परवर्ती समीक्षक इस बात से पूरी तरह सहमत नहीं हैं तथा उनकी दृष्टि में 'अभिव्यंजनावाद' व 'वक्रोक्ति सिद्धान्त' में जो साम्य दिखता है वह सतही है। अवधारणात्मक स्तर पर इनमें साम्यता की कोई उल्लेखनीय प्रतीति नहीं होती। उदाहरण के लिए एक ही शब्द 'अभिव्यक्ति' का प्रयोग कुन्तक तथा क्रोचे अलग अलग अर्थ में करते हैं। कुन्तक के 'वक्रोक्ति' की जहाँ बाह्य जगत् में सिद्धि होती है, वहीं क्रोचे 'अभिव्यंजना' को मानसिक स्तर पर ही सिद्ध मान लेते हैं। विवेचनार्थ, 'अभिव्यंजनावाद' तथा 'वक्रोक्ति सिद्धान्त' के साम्य को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है; यथा –

(i) 'वक्रोक्ति' व 'अभिव्यंजना' सिद्धान्त मूलत: कलावादी हैं तथा ये दोनों ही साहित्य अथवा काव्य को सौन्दर्यशास्त्र की कसौटी पर ही जाँचने के पक्षपाती हैं।

(ii) दोनों स्थापनाओं में 'कल्पना' को प्रमुखता दी गई है। कुन्तक जहाँ 'वक्रोक्ति' को काव्य की आत्मा मानते हुए कल्पना की आवश्यकता पर विशेष जोर देते हैं, वहीं क्रोचे संवेदनों को सहजानुभूति-अभिव्यंजना में बदलने हेतु कल्पना की भूमिका अनिवार्यत: स्वीकार करते हैं।

(iii) सैद्धान्तिक विवेचन के अनुक्रम में कुन्तक तथा क्रोचे दोनों ही क्रमश: वक्रोक्ति या अभिव्यंजना को एक सम्पूर्ण इकाई के रूप में स्थापित करते हैं तथा उसके वर्गीकरण के खिलाफ हैं।

उपर्युक्त उल्लिखित 'अभिव्यंजनावाद' तथा 'वक्रोक्ति' सिद्धान्त की कतिपय समानताओं के बावजूद उनमें कई स्थानों पर वैषम्यता सहज ही अनुभूत है; यथा –

(i) क्रोचे तथा कुन्तक की कला सम्बन्धी अवधारणा पृथक्-पृथक् है। क्रोचे कला को अपने आप में सम्पूर्ण तथा स्वयं अपना लक्ष्य मानते हैं। साथ-ही-साथ वे कला के सामाजिक सन्दर्भ तथा सरोकार को पूरी तरह नकारते हैं। लेकिन, कुन्तक के यहाँ कला साधन है, साध्य नहीं। उनके अनुसार कला उपयोगिता और नैतिकता से भी जुड़ी हुई है।

(ii) क्रोचे के अनुसार जहाँ कला होती है, वहाँ आनन्द भी अनिवार्यत: होता है। दूसरी ओर कुन्तक आनन्द को कला का प्रयोजन स्वीकार करते हैं।

(iii) कुन्तक की दृष्टि में कला सोद्देश्य होती है, जबकि क्रोचे की मान्यता है कि सोद्देश्य होने पर कला में सहजता नहीं रह जाती है।

(iv) क्रोचे के अनुसार चूँकि अभिव्यंजना या कला मानसिक स्तर पर ही पूर्ण हो जाती है, इसलिए वे उसकी बाह्य अभिव्यक्ति को अनावश्यक व अतिरिक्त क्रिया मानते हैं। ठीक इसके विपरीत, कुन्तक का मानना है कि अभिव्यंजना का मतलब ही अभिव्यक्ति है यानी मानसिक स्तर पर रची हुई उक्ति का बाह्य जगत् में प्रकटीकरण है।

(v) क्रोचे की दृष्टि में कला सहज है, इसलिए यह सहजानुभूति है। परन्तु कुन्तक कला को आयास-साध्य मानते हैं। उनके अनुसार उक्ति में विदग्धता, विचित्रता तथा चमत्कार पैदा करने हेतु कलाकार को आवश्यक प्रयास करना ही पड़ता है।

(vi) क्रोचे के अनुसार अभिव्यंजना कभी असफल नहीं होती है। इसलिए श्रेष्ठता के आधार पर कृतियों का विभाजन अथवा वर्गीकरण नहीं होता। हालाँकि, कुन्तक स्वीकार करते हैं कि विभिन्न कृतियों की गुणवत्ता में अन्तर होता है।

अस्तु, देशकाल व वातावरण के आलोक में ध्यातव्य है कि कुन्तक तथा क्रोचे की जीवन दृष्टि व कला दृष्टि एक समान न होकर अलग-अलग है। हालाँकि, सैद्धान्तिक स्थापनाओं के विवेचन क्रम में कहीं-कहीं शब्दावली साम्य की प्रतीति उनमें अवश्य होती है, लेकिन उन शब्दावलियों के निहितार्थ गहरे नहीं हैं। इसलिए 'अभिव्यंजनावाद' व 'वक्रोक्ति सिद्धान्त' को एक ही श्रेणी में रखने की बजाय अलग अलग श्रेणी में रखना यथोचित होगा।

3.2.4. अभिव्यंजना सिद्धान्त की सीमाएँ

बेनेदितो क्रोचे मूलत: साहित्यशास्त्री न होकर दार्शनिक व सौन्दर्यशास्त्री हैं। उन्होंने सौन्दर्यशास्त्र को बहुत ही व्यापक अर्थों में ग्रहण किया है। कहना गलत न होगा कि उनके 'अभिव्यंजनावादी' स्थापना में सौन्दर्यशास्त्रीय विवेचन के साथ-साथ उनकी समीक्षा दृष्टि भी सहज परिलक्षित होती है। हालाँकि, बेनेदितो क्रोचे अपनी सैद्धान्तिक व्याख्या में बाह्य अभिव्यक्ति को पूरी तरह नकारते हुए मानसिक स्तर पर ही कला को सम्पूर्ण रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। इस तरह उनकी अभिव्यंजनावादी स्थापना पारम्परिक कलावाद की अतिशय सीमा को भी लाँघ देता है।

नि:संदेह, क्रोचे के 'अभिव्यंजनावाद' में निहित इस घोर आत्मपरकता तथा इससे जुड़ी हुई मान्यताओं को परवर्ती विचारकों व समीक्षकों ने अत्यन्त गहराई से अध्ययन एवं विवेचन किया है। विवेचनात्मक सन्दर्भ में, 'अभिव्यंजना सिद्धान्त' की कतिपय महत्त्वपूर्ण सीमाओं का उल्लेख निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है; यथा –

1) 'अभिव्यंजनावाद' की मान्यताएँ वस्तुत: कला के अमूर्त रूप से जुड़ी हुई हैं, जबकि कला का क्षेत्र मूर्त है। इतना ही नहीं, यदि कला की अभिव्यक्ति मन में बिम्बों के रूप में पूर्ण हो जाती है तो उसे बाह्य जगत् के सम्मुख लाने की क्या आवश्यकता है, इस सवाल का जवाब भी 'अभिव्यंजनावाद' में नहीं मिलता है।

2) 'अभिव्यंजनावाद' में प्रवर्तक बेनेदितो क्रोचे ने कतिपय शब्दों का स्वेच्छापूर्वक अर्थ ग्रहण किया है। परिणामस्वरूप उनके सैद्धान्तिक विवेचन में बहुत दुरूहता आ गई है। उदाहरण के तौर पर उन्होंने कला, सहजानुभूति, अभिव्यंजना, सौन्दर्य, कल्पना आदि को एक दूसरे का पर्याय मान लेते हैं।

3) बेनेदितो क्रोचे सहजानुभूति को बौद्धिकता से रहित मानते हैं, लेकिन व्यावहारिक जीवन दृष्टि में इस पार्थक्य को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

4) वस्तुतः प्रत्येक रचनाकार जीवन को अपने ढंग से, अपनी दृष्टि से देखता है तथा अपनी कृति में उसी दृष्टि को अभिव्यक्त करता है, लेकिन 'अभिव्यंजनावाद' में इसका उल्लेख नहीं है।

5) क्रोचे बाह्य स्तर पर कला की अभिव्यक्ति को 'स्मृति की सहायक' मात्र स्वीकार करते हैं। लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट नहीं किया है कि वे किसकी स्मृति की बात कर रहे हैं।

6) क्रोचे सौन्दर्यशास्त्रीय विवेचना के अनुक्रम में समीक्षा कर्म की भी चर्चा करते हैं, किन्तु किसी कृति की समीक्षा तभी सम्भव है जब वह बाह्य जगत् में अभिव्यक्त हो। ऐसी अभिव्यक्ति को उन्होंने कलाकृति से अतिरिक्त और प्रासंगिक मात्र मानते हैं। इस तरह समीक्षा कर्म की चर्चा करते हुए क्रोचे प्रकारान्तर से उसे सौन्दर्यशास्त्र का एक महत्त्वहीन और अनावश्यक प्रसंग मात्र मानते हैं।

7) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अभिव्यंजनावाद विशेष महत्त्व न देते हुए उसे 'भारतीय वक्रोक्ति सिद्धान्त का विलायती उत्थान' मात्र स्वीकार किया है।

उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद भी पाश्चात्य सौन्दर्यशास्त्रीय विवेचन में बेनेदितो क्रोचे के योगदान की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। आत्मपरक दृष्टि पर अतिरिक्त बल देकर उन्होंने साहित्य और कला को घोर वस्तुपरकता की परिधि से बाहर निकालने में बहुत हद तक सफल हुए हैं। चूँकि, तत्युगीन समीक्षा में विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति बढ़ गई थी, इसलिए कृति का समग्र सौन्दर्य उपेक्षित रह जाता था। यही कारण है कि उन्होंने एक सौन्दर्य वस्तु के रूप में रचना की समग्रता और संश्लिष्टता के महत्त्व को रेखांकित करने का एक बड़ी सीमा तक प्रयास किया है। इतना ही नहीं, काव्य में अलंकरण की प्रवृत्ति को अनावश्यक मानते हुए क्रोचे जहाँ एक ओर रचना की अन्तर्वस्तु और उसकी पहचान पर अधिक जोर देते हैं, वहीं दूसरी ओर रचना तथा आलोचना की भाषा की जीवन्तता और गतिशीलता के आलोक में उन्होंने भाषा की शक्ति व सम्भावनाओं को उजागर किया है।

3.2.5. सारांश

पाश्चात्य काव्य चिन्तन के क्षेत्र में प्रारम्भ से ही सौन्दर्य तत्त्व की विवेचना होती रही है। बेनेदितो क्रोचे जैसे विचारकों ने सौन्दर्य को कला एवं साहित्य के केन्द्रीय तत्त्व के रूप में स्थापित करने का महती प्रयास किया है। उनकी दृष्टि में केवल सौन्दर्य की खोज तथा निरूपण ही कला का उद्देश्य है। सारत: अभिव्यंजनावाद में आदर्शवादी सौन्दर्य दर्शन की चरम परिणति हुई है। वस्तुतः मार्क्स द्वारा प्रतिपादित द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद (वस्तुवादी दृष्टि) को क्रोचे स्वीकार नहीं करते हैं। साथ ही वे मन और उसकी मानसिक क्रियाओं के व्यापार से सम्बन्धित अन्तर्मुखी चेतना के दर्शन की महत्त्व प्रतिष्ठापित करते हैं जिसका साहित्य समीक्षा तथा कला दर्शन पर व्यापक एवं विस्तृत प्रभाव पड़ा है। अभिव्यंजना सिद्धान्त में उन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर चर्चा करते हुए 'सहजानुभूति' को स्वत:स्फूर्त माना है। सहजानुभूति और कला को अभिन्न मानते हुए उन्होंने सामान्य अनुभूति और कलानुभूति में भी कोई भेद स्वीकार नहीं किया है।

3.2.6. शब्दावली

अभिव्यंजना	:	स्वयं प्रकाश ज्ञान
आत्मवादी	:	आत्मकेन्द्रित
वस्तुवादी	:	वस्तु जगत् केन्द्रित
अनुभूति	:	चेतना
अन्तर्वस्तु	:	कथ्य

3.2.7. उपयोगी ग्रन्थ सूची

1. सुधांशु, डॉ० लक्ष्मीनारायण, काव्य में अभिव्यंजनावाद, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना.
2. जैन, निर्मला, काव्य चिन्तन की पश्चिमी परम्परा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.
3. गुप्त, शान्ति स्वरूप, पाश्चात्य आलोचना के काव्य सिद्धान्त, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली.
4. शर्मा, डॉ० देवेन्द्रनाथ, पाश्चात्य काव्यशास्त्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.
5. जैन, निर्मला, पाश्चात्य साहित्य चिन्तन, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली.
6. श्रीवास्तव, अर्चना, भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, नई दिल्ली.
7. सिंह, विजय बहादुर, पाश्चात्य काव्यशास्त्र, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली.
8. भारद्वाज, मैथिलीप्रसाद, पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धान्त, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला.

3.2.8. सम्बन्धित प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. बेनेदितो क्रोचे के अभिव्यंजनावाद की मूल स्थापनाओं पर प्रकाश डालिए।
2. अभिव्यंजनावाद और वक्रोक्ति सिद्धान्त के वैषम्य को स्पष्ट कीजिए।
3. चेतना की मूलभूत क्रियाओं को समझाइए।
4. बेनेदितो क्रोचे ने सौन्दर्यवाद की व्याख्या किस प्रकार की है ?
5. अभिव्यंजना के स्वरूप पर प्रकाश डालिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. "क्रोचे के दर्शन में कला सहजानुभूति के अतिरिक्त कुछ नहीं अथवा वह मानस के अन्दर प्रभावों की अभिव्यक्ति है"। परीक्षण कीजिए।
2. "बेनेदितो क्रोचे कला को नैतिक बन्धनों से स्वतंत्र मानकर भी स्वेच्छारिता को प्रश्रय नहीं देता"। टिप्पणी कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'अभिव्यंजनावाद' को 'भारतीय वक्रोक्ति सिद्धान्त का विलायती उत्थान' किसने कहा है ?
   (a) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
   (b) आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
   (c) रामविलास शर्मा
   (d) डॉ॰ नगेन्द्र

2. 'न्यू एस्सेज़ ऑन एस्थेटिक' का प्रकाशन कब हुआ ?
   (a) 1905 ई. में
   (b) 1910 ई. में
   (c) 1915 ई. में
   (d) 1920 ई. में

3. क्रोचे के अनुसार कला की प्रक्रिया होती है –
   (a) सोची-समझी
   (b) बिना सोची-समझी
   (c) थोपी हुई
   (d) उपर्युक्त सभी

4. क्रोचे की स्थापनाओं में 'अभिव्यंजना' है –
   (a) एक खण्डित इकाई
   (b) एक अखण्डित इकाई
   (c) उपर्युक्त दोनों
   (d) इनमें से कोई नहीं

5. क्रोचे के मतानुसार भाषा का स्वरूप होता है –
   (a) स्थिर
   (b) गतिशील
   (c) पारम्परिक
   (d) इनमें से कोई नहीं

❖❖❖